International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 07-09-2020; Accepted: 17-09-2020; Published: 08-10-2020
www.socialsciencejournal.in
Volume 6; Issue 5; 2020; Page No. 86-88

महिला एवं पितृसत्तात्मक समाज

प्रतिमा सिंह
शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
पितृसत्ता एक सार्वभौमिक व सामाजिक सत्ता है। पितृसत्ता का मूलभूत अर्थ है 'पिता का शासन' से है। पीटर लैसलेट ने अपनी पुस्तक 'द वर्ल्ड वी लास्ट' में औद्योगीकरण से पहले इंग्लैंड के समाज की परिवारिक व्यवस्था में पहली खासियत उसका पितृसत्तात्मक होना बताया था। भारत के संदर्भ में देखें तो इस तरह की परिवारिक व्यवस्था (संयुक्त परिवार) आजादी के बाद काफी सालों तक बनी रही। आज सभी समाजों में पितृसत्ता का अर्थ हो गया है–पुरुषों का शासन। पितृसत्ता को एक व्यवस्था के रूप में देखना महत्वपूर्ण है क्योंकि यह कोई कानून या सरकार से स्थापित नहीं होती, यह स्थापित होती है सामाजिक मानदंडों से, परम्परा एवं रूढ़िवादियों से। पितृसत्तात्मक समाज एक ऐसा समाज है जहां महिलाओं व पुरुषों में अंतर स्थापित करते हुए पदसोपानात्मक व्यवस्था स्थापित हो जाती हो, जिसके तहत पुरुष सर्वश्रेष्ठ हो जाते हैं और महिला उनके अधीन।

मूल शब्दः पितृसत्ता, नारीवाद, सुरक्षा, विभेदीकरण, मानवता, असमानता आदि

प्रस्तावना
पितृसत्ता नारीवादी अवधारणा के रूप में बीसवीं सदी के आठवें दशक में नारीवादी विशेषज्ञों ने पितृसत्ता शब्द का प्रयोग किया। उनके अनुसार पितृसत्ता का प्रयोग स्त्री और पुरुष के बीच सत्ता के लिए किया गया। नारीवादियों के अनुसार सभी समाजों में 'लैंगिक विभेदीकरण' पाया जाता है और यह इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि इन दोनों समूहों की सामाजिक स्थिति समाज में उनकी भूमिकाएं निर्धारित करती हैं। यह सार्वभौमिक सत्य है कि समाज में पितृसत्ता पाई जाती है और इसीलिए समाज में असमानता स्थापित होती है।

पितृसत्ता का अर्थ–विस्तार
उग्रवादी नारीवादियो ने पितृसत्ता को महिलाओं के शोषण के लिए उत्तरदायी माना। केट मिलेट ने अपनी कृति 'सेक्सुअल पॉलिटिक्स' में कहा है– 'सरकार ही पितृसत्तात्मक है' क्योंकि वह ऐसी व्यवस्था का समर्थन करती है जिसमें आधी जनसंख्या यानि कि पुरुष और शेष आधी जनसंख्या यानि कि महिलाओं पर अपना प्रभुत्व स्थापित करते हैं। इस तरह केट मिलेट ने 'पिता के शासन' को 'पुरुषों के शासन' के रूप में रूपांतरण कर दिया। सिमोन द बुआ ने अपनी पुस्तक 'द सेकेण्ड सेक्स' में माना कि स्त्री पैदा नहीं होती बल्कि समाज द्वारा बनाई जाती है। पितृसत्तातमक समाज में महिला को दूसरी वरीयता दी जाती है। सुलासमिथ फायरस्टोन ने अपनी पुस्तक 'द डायलेक्टिक्स ऑफ सेक्स' में लैंगिक विभाजन के लिए पितृसत्ता को ही जिम्मेदार माना है तथा इसके साथ–साथ स्त्री पुरुष के बीच जैविक अंतर को भी महत्व दिया है एवं स्त्री की शारीरिक संरचना में उसकी अधीनता का प्रमुख कारण प्रजनन क्षमता को माना है। स्त्री अधीनता के धागे यौनिकता, प्रजनन, विवाह, पत्नीत्व, मातृत्व, घरेलू कामकाज आदि से जुड़े होते हैं; यद्यपि समय के साथ वे अदृश्य हो जाते हैं किन्तु यही धागे स्त्री के जीवन के मायने बदल देते हैं। फायरस्टोन का प्रयास था कि यह हकीकत जगजाहिर हो। फलस्वरूप उग्रवादी नारीवादियों ने महिला एकता स्थापित करने के साथ–साथ कुछ ऐसे सुझाव भी दिए प्रायः जिनकी आलोचनाएं भी की गई। सिमोन द बुआ ने कहा है कि महिलाओं को स्वतंत्रता के लिए अपने लैंगिकता, शरीर के प्रतिबंध से ऊपर उठना होगा। फायरस्टोन ने कहा कि महिलाओं को जैविक प्रकृति से ऊपर उठना होगा इसके लिए आधुनिक तकनीकी महिलाओं के लिए सहायक हो सकती है क्योंकि इसके द्वारा महिला को अपने गर्भ में बच्चा पालने की आवश्यकता नहीं होगी। बच्चे प्रयोगशाला में पैदा हो सकते हैं; टेस्ट–ट्यूब बेबी का निर्माण किया जा सकता है। इस तरह महिलाएं परिवार में बच्चे के पालन पोषण की जिम्मेदारी से मुक्त हो जाएंगी। उग्रवादी नारीवाद द्वारा पितृसत्ता के उकेरे गये इस स्वरूप और उसकी व्याख्या की नारीवादियों ने भी आलोचना की है।

पर्यावरणीय नारीवाद व पितृसत्ता
1970 के दशक में पर्यावरणवाद को नारीवाद से जोड़ने का प्रयास किया गया तथा 1980 के दशक में यह अवधारणा सशक्त हुई। इनके अनुसार पितृसत्ता और पूंजीवाद इन दोनों ने मिलकर 'महिला और प्रकृति' का शोषण किया है तथा पुरुष, पितृसत्ता, पूंजीवाद तीनों मिलकर महिला और प्रकृति का शोषण करते रहे है। नारी जननी होती है और इसका प्रकृति से बहुत गहरा संबंध होता है। पर्यावरणीय नारीवाद का मानना है कि महिलाओं में अर्न्तज्ञान (मन की सोच) अधिक होता हैं और पुरुषों में बौद्धिकता, तर्कशक्ति आदि अधिक पाई जाती है। चूंकि समाज पितृसत्तात्मक है इसलिए पुरुष यानी बौद्धिकता को विशेष महत्व दिया जाता है तथा महिला–सुलभ गुण की अवहेलना की जाती है। पर्यावरणीय नारीवाद की दो प्रमुख शाखाएं हैं, यथा–

- उग्रवादी पर्यावरणीय नारीवाद
- सांस्कृतिक पर्यावरणीय नारीवाद

उग्रवादी पर्यावरणीय नारीवाद पितृसत्ता और पूंजीवाद को महिला शोषण के लिए उत्तरदाई मानते हैं जबकि सांस्कृतिक पर्यावरणीय नारीवाद का मानता है कि प्रकृति और महिला समान हैं। इसलिए यह उनकी पवित्रता को बचाने के लिए प्रयास करती हैं। चिपको आंदोलन का उदाहरण इस संदर्भ में विशेष महत्वपूर्ण है। मैरी डेली ने अपनी ष्ळलद म्बवसवहलष तथा वंदना शिवा ने अपनी किताब ष्म्बव – थ्मउपदपेउष में माना है कि विज्ञान एवं विकास ने

महिलाओं के प्राकृतिक ज्ञान को धीरे–धीरे नष्ट कर दिया है और कृत्रिम ज्ञान का ही विकास किया है।

समाजवादी नारीवाद व पितृसत्ता

समाजवादी नारीवादी चिन्तक भ्मपकप भ्ंतजउीद ने माना कि पितृसत्ता का आधार भौतिक है, जिससे महिला और पुरुष के बीच पदसोपानात्मक संबंध स्थापित होता है। मार्क्सवादी नारीवाद पितृसत्ता को पूंजीवाद की उपज मानता है। उसके अनुसार परिवार स्त्री के शोषण का प्राथमिक स्थल है। स्त्रियों द्वारा किए जाने वाले घरेलू श्रम से सीधे पूजीपतियों का लाभ होता है न कि पुरुषों का। समाजवादी नारीवाद पितृसत्ता को पूंजीवाद की उपज नहीं बल्कि एक दूसरे से जुड़े हुए मानते हैं। जैसा कि जिल्ला आइजेन्सिटन इस जुड़ाव को दो जिस्म और एक जान माना है।

कमला भसीन पितृसत्ता को दक्षिण एशिया के परिवेश में विवेचना करते हुए लिखती हैं कि पितृसत्ता शरीर के उन रिश्तो को दर्शाती है जिनके माध्यम से पुरुषों का स्त्रियों पर वर्चस्व स्थापित होता है तथा उसके व्यक्तित्व के विकास के अवरोधन को धार्मिक व नैतिक जामा पहना दिया जाता है। धर्म समाज व रूढ़िवादी परम्परा पितृसत्ता को और अधिक ताकतवर बनाती हैं। बचपन से ही ऐसे संस्कार दिए जाते हैं कि वह अपनी सुरक्षा एवं अपने निर्णय लेने के लिए पुरुषों पर निर्भर रहे। इसी वजह से परिवार कार्यस्थल, समाज, राज्य यहां तक कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी महिलाओं को विभिन्न प्रकार की हिंसा और भेदभाव जैसी समस्याओं से जूझना पड़ता है उनका सामना करना पउ.ता है।

गर्दा लर्नर ने पितृसत्ता की सबसे सटीक परिभाषा दी है उनके अनुसार 'पितृसत्ता परिवार में महिलाओं और बच्चों पर पुरुषों के वर्चस्व की अभिव्यक्ति और संस्थाकरण तथा सामान्य रूप से महिलाओं पर पुरुषों के सामाजिक वर्चस्व का विस्तार है।' इसका अभिप्राय यह है कि पुरुषों का समाज के सभी महत्वपूर्ण सत्ता प्रतिष्ठानों आदि पर नियंत्रण रहता है और महिलाएं ऐसी सत्ता तक पहुंच से सर्वदा वंचित रहती हैं।

एक विशेष वर्ग के स्त्री–पुरुषों के साझा पहलुओं और उनके बीच मूलभूत असमाताओं को एक जेंडर वर्कशॉप में सरल किन्तु सटीक बिम्बों के जरिए एक ग्रामीण महिला ने अभिव्यक्त किया था– ''हमारे परिवारों में पुरुष सूर्य की तरह है– उनका प्रकास उनका अपना होता है क्योंकि वह संसाधनों के मालिक हैं उनके पास आय हैं, घूमने–फिरने और अपने निर्णय लेने की आजादी है; महिलाएं उपग्रहों की तरह हैं, जिनके पास अपना कोई प्रकाश नहीं होता और वे केवल तभी प्रकाशित होती हैं जब सूर्य की रोशनी उन तक पहुंचती है'' अर्थात् केवल तभी जब वे व्यवस्था का अनुकरण करें और पितृसत्ताओं की जरूरतों की पूरी करें।

भारत एवं पितृसत्तात्मक समाज का स्वरूप

पितृसत्ता की प्रकृति विभिन्न कालों में अलग–अलग समाजों तथा एक ही समाज में अलग–अलग जातियों, वर्गों व वर्णों में भिन्न–भिन्न रही है। भारतीय समाज को पितृसत्ता की व्यवस्था को ब्राह्मणवादी पितृसत्तात्मक समाज कहा जाता है क्योंकि यहां का समाज जाति व्यवस्था पर आधारित है। इस तरह पितृसत्तात्मक व्यवस्था हमेशा लोकतांत्रिक मूल्यों के विपरीत रही है। वर्तमान में पितृसत्तात्मक समाज में पितृसत्ता के लक्षण कई रूपों में दिखाई पड़ते हैं। सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से आज भी समाज में लैंगिक विभाजन विद्यमान हैं और समाज में लड़का–लड़की के बीच खान–पान, रहन–सहन, सुविधाओं एवं जिम्मेदारियों पर भेदभाव करना, सार्वजनिक स्थानों में भी स्त्रियों के साथ हिंसा, एसिड अटैक, बलात्कार, गैंगरेप, महिला तस्करी, वेश्यावृत्ति, दहेज हत्या, कन्या भ्रूण हत्या, घरेलू हिंसा आदि जैसे लक्षण महिलाओ को दबाने एवं उनकी आवाज को बुलंद न होने की राह में पितृसत्तात्मक समाज के लक्षण दिखाई देते हैं। उग्रवादी विचारक बीयर ने भी माना कि महिलाओं को दब्बू बनाने एवं उनके साहस–सक्रियता को दबाने का समाज द्वारा निरन्तर प्रयास किया जाता रहा है। आज लैंगिक विभाजन के आधार पर श्रम विभाजन किया जाता है, महिलाओं को बाहर के काम के साथ–साथ घर के काम की भी जिम्मेदारी होती है। अगर कोई महिला कामकाजी नहीं है तो उससे ज्यादा से ज्यादा घरेलू काम करवाया जाता है। अगर महिला कामकाजी है तो उस पर अधिक से अधिक धन कमाने एवं परिवार में धन देने का दबाव डाला जाता है। इस प्रकार शोषण दोनों प्रकार की महिलाओं का होता है बस तरीके अलग–अलग होते हैं।

आज भी स्त्री के प्रजनन के अधिकार पर दुनिया में कई प्रकार के नियंत्रण हैं। पुरुष, परिवार, धार्मिक संस्थाएं तथा राज्य सभी प्रजनन संबंधी मामलों में हस्तक्षेप का अधिकार रखते हैं। एक महिला कब और कितने कितने बच्चों को जन्म देगी यह उसका पति या परिवार या राज्य निर्धारित करता है। इसके लिए आधुनिक राज्य 'परिवार नियोजन' कार्यक्रम चलाता है। राज्य सरकारों की जनसंख्या नीति सम्बद्ध राज्य में जनसंख्या के घनत्व व संसाधनों की उपलब्धता के आधार पर निर्धारित होती है और एक महिला को राज्य की नीतियों के अनुसार कम या अधिक बच्चों को जन्म देने हेतु प्रेरित किया जाता है। कैट मिलेट की उक्ति– 'सरकार ही पितृसत्तात्मक है' बिल्कुल सटीक है। राजनीतिक दृष्टि से देखा जाए तो वर्तमान में हमारे देश में महिलाएं प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, लोकसभा अध्यक्ष आदि के अलावा कई अन्य महत्वपूर्ण राजनीतिक पदों पर कार्यरत रही हैं लेकिन फिर भी भारतीय राजनीति में महिलाओं की स्थिति ज्यादा सुखद नहीं दिखाई देती। हमारे यहां शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, सुरक्षा व मानवाधिकार से जुड़े, मुद्दे लम्बे समय तक उपेक्षित रहे हैं। भारतीय राजनीति में पुरुषों का वर्षों पुराना वर्चस्व, पितृसत्तात्मक समाजिक ढॉचा, वोट बैंक की राजनीति, राजनीति में महिलाओं को वोट बैंक के रूप में प्रयोग किये जाने के कारण राजनीति में महिलाओं की भागीदारी अनवरत कमजोर होती रही है। इसके पीछे एक प्रमुख कारण यह है कि हमारी संस्कृति महिला को 'घरेलू' ही समझती है। 'सरपंच पति' का चलन भी पितृसत्तात्मक समाज की ही देन है।

इस प्रकार स्त्री अधीनता और पुरुष आधिपत्य की स्थिति अपने आप में एक सत्ता संरचना है न कि किसी बृहत्तर सत्तामक व्यवस्था का हिस्सा। इस तथ्य को उजागर करने के उद्देश्य से रेडिकल नारीवादियों ने सर्वप्रथम पितृसत्ता का विरोध करना शुरू किया। उन्होंने पितृसत्ता कि जो तस्वीर खींची उसमें सत्ताविहीन एक समूह के रूप में एक ओर स्त्रियां थी और दूसरी ओर सत्तावान पुरुषों का समूह। स्त्रियों के बीच विद्यमान विभिन्नताओं को उन्होंने नजरअंदाज किया। उन्होंने इस तथ्य की तरफ भी ध्यान देना जरूरी नहीं समझा कि सभी पूर्ण सत्तावान नहीं है। इसके अलावा स्त्री अधीनता की जड़ उन्हें उसकी प्रजनन क्षमता में नजर आई, जिसके नाम पर परंपरावादी स्त्री अधीनता को उचित ठहराते आ रहे हैं। नारीवादियों के बीच पितृसत्ता की उत्पत्ति भी बहस का मामला है। गर्दा लर्नर ने यह प्रस्तावित किया कि पितृसत्ता इतिहास के किसी पड़ाव पर उत्पन्न नहीं हुई थी और न ही इसके पीछे किसी एक कारण का हाथ था। इसके आकार लेने में लगभग ढ़ाई हजार वर्ष लगे होंगे। इसलिए पितृसत्तात्मकता अलग–अलग समाजों में अलग–अलग रूप दिखाई पड़ती है। इसके अलावा नारीवादियों ने पितृसत्ता की तरह कभी मातृसत्ता के होने की धारणा का भी खंडन किया है।

निष्कर्ष

कुल मिलाकर देखा जाए तो समाज में जिसके पास शक्ति है उसकी ही बात सुनी और मानी जाती है, चाहे वह पितृसत्ता हो या मातृसत्ता। भारत में पुरुषों का वर्चस्व सभी क्षेत्रों (सामाजिक,

आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और धार्मिक) में होने के कारण पितृसत्तात्मक समाज विद्यमान है, जिसमें पुरुष प्रधान व महिला अधीन मानी जाती है। संक्षेप में कहें तो गर्दा लर्नर ने विचारधारा के तौर पर सटीक ही माना है कि महिलाएं पितृसत्ता को बने रहने में सहायता देती हैं क्योंकि वह पुरुष वर्चस्व की विचारधारा को आत्मसात् करने के माध्यम से उसके प्रति अपनी मूक सहमति प्रदान करती हैं।

हम यह कह सकते हैं कि अभी भी महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु बहुत कुछ किया जाना बाकी है। इस सन्दर्भ में संयुक्त राष्ट्र संघ ने महिलाओं की स्थिति को बेहतर बनाने के लिए कई प्रस्ताव दिए, जैसे स्त्री पुरुष के लिए समान कार्य हेतु समान वेतन, महिलाओं को विभिन्न संसाधनों, रोजगार के अवसर, बाजार व्यवस्था, व्यापार एवं सूचना प्रोद्योगिकी आदि में बराबरी का हिस्सा मिले, कार्यस्थल पर महिलाओं के साथ हाने वाले यौन उत्पीड़न एवं भेदभाव को दूर किया जाए। इसके साथ साथ वैश्वीकरण ने हमें एक ऐसी पृष्ठभूमि प्रदान करने का कार्य किया है, जिसमें हम विभिन्न लैंगिक पूर्वाग्रहों से बाहर निकल कर एक गरिमापूर्ण जीवन जीने की परिस्थिति उत्पन्न कर सकते हैं। इस प्रकार संक्षेप में कहें तो विगत कुछ वर्षों में महिलाओं के राजनीतिक सामाजीकरण की प्रक्रिया के साथ साथ समावेशी विकास की सेकल्पना के परिणामस्वरूप महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ है किंतु अपेक्षित सुधार अभी भी बाकी है।

संदर्भ सूची

1. कुमार, राधाः स्त्री संघर्ष का इतिहास, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2011.
2. यादव, राजेंद्र एवं अन्य (संपादक): पितृसत्ता के नए रूप, स्त्री और भूमंडलीकरण, नई दिल्ंली, वाणी प्रकाशन, 2009.
3. राय, प्रवीणः क्यों महिलाएं निर्णायक भूमिका में नहीं, 31 मई 2014.
4. शारदा, सैलवीः 40 वीमेन विन टू क्रिएट रिकॉर्ड, टाइम्स ऑफ इंडिया, 13 मार्च 2017.
5. शर्मा, रेखा (2012): दलित महिलाएं एवं मानवाधिकार, रावत प्रकाशन, 4264/3 अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली.
6. पाण्डेय, तेजस्कर एवं पाण्डेय, संगीता (2012): भारत में सामाजिक समस्यायें, टाटा मैक्ग्रा हिल पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
7. जनसत्ता
8. www.mahilaayog.up.nic.in
9. The Hindu